शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 मई 2014

रवीन्द्रनाथ त्यागी के व्यंग्य निबन्धों में राजनीतिक चेतना

सन्तोष विश्नोई (शोधार्थी)
हिन्दी विभाग वनस्थली विद्यापीठ
राजस्थान, भारत

शोध संक्षेप

लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था में शासन व्यवस्था का संचालन अप्रत्यक्ष रूप से जनता के हाथों में होता है इसलिए जीवन की वर्तमान प्रक्रिया में आज राजनीति अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हो गयी है। आज राजनीतिक चेतना हमारे समय का मुख्य स्वर बन गई है इसलिए समकालीन साहित्य में इसकी अभिव्यक्ति एक आवश्यक शर्त के रूप में सामने आती है। साहित्य के लिए राजनीति कच्चे माल का काम करती है। व्यंग्य लेखकों ने अनेकानेक तरीकों से राजनीति में व्याप्त विसंगतियों को अपनी लेखनी के माध्यम से व्यक्त किया है। प्रस्तुत शोध पत्र में रवीन्द्रनाथ त्यागी के व्यंग्य निबंधों के राजनीतिक चेतना की चर्चा की गयी है।

प्रस्तावना

वर्तमान में भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था जहाँ अनेक क्षेत्रों में प्रगति के नये आयामों को छू रही है वहीं अगनित समस्याओं से संघर्ष भी हो रहा है। आज राष्ट्रों की सीमाएं टूट रही हैं। अन्तर्राष्ट्रीय शासन तन्त्र की बात चल रही है फिर भी युद्ध की विभिषिका से व्यक्ति अपने भविष्य के प्रति आशंकित है। कहीं तो व्यक्ति अन्तर्राष्ट्रीय अवसरों से उत्साहित है तो कहीं विनाश से आंतकित। इस तरह राजनीति से प्रत्येक व्यक्ति का लगाव स्वाभाविक है। साहित्य से राजनीति का घनिष्ठ संबंध होता है। प्रत्येक कालखंड का साहित्य अपने समय की गतिविधियों से प्रभावित होता है। साहित्यकार युग दृष्टा और युग सृष्टा होते हैं। साहित्यकार अतीत और वर्तमान के आधार पर भविष्य के नव निर्माण की नींव रखते हैं-"साहित्यकार जीवन को सत्यता ही नहीं देता वरन् सत्य को समझने की दृष्टि भी देता हैं।"1

वर्तमान साहित्य राजनीति में व्याप्त भ्रष्टाचार, अनैतिकता, धनलोलुपता, आरक्षण राजनीति का विरोध, मत (वोट) की घातक राजनीति, वंशानुगत व्यवस्था प्रक्रिया व पद लोलुपता आदि को उजागर करती हुई उसके प्रति पीड़ा व्यक्त करता है। राजनीति में होने वाले मूल्यों, आदर्शों, सिद्धान्तों एवं प्रतिमानों के बदलाव को एक साहित्यकार अपनी रचनाओं में जरूर अभिव्यक्ति प्रदान करता है। फिर एक व्यंग्यकार का दायरा तो और भी विस्तृत होता है। व्यंग्य की उपादेयता विसंगतियों की बयानबाजी मात्र नहीं हो सकती। उसे कारणों के मूल में जाकर उस कारण का संशोधन एवं सुधार भी करना होता है, जिसके कारण विसंगतियाँ जन्म लेती हैं। रवीन्द्रनाथ त्यागी एक ऐसे व्यंग्यकार रहे हैं जिन्होंने राजनीति के क्षेत्र में चलने वाली उठापटक, घटनाओं एवं दावपेचों को पूरी समग्रता के साथ चित्रित किया है।

आज राजनीति और नेता का नाम व्यंग्य का पर्याय बन गया है। राजनीति की गंदगी के प्रति

रवीन्द्रनाथ त्यागी ने एक व्यंग्यकार के रूप में हमेशा सतर्कता की भूमिका निभाई है। उन्होंने उसकी असलियत उजागर करने और हथकंडों का यथार्थ उजागर करने का बीड़ा उठाया। राजनीतिक ठगों की निर्लज्ज लूट ने आम भारतीय नागरिकों के मन को कैसे आहत किया और उसकी क्या प्रतिक्रिया हुई, जनता के मानस में क्या बिंब उभरे इसकी जीवंत प्रस्तुति की है।

निबंधों में व्यंग्य चेतना

रवीन्द्रनाथ त्यागी के लेखन में राजनैतिक सन्दर्भ वहाँ आए जहाँ राजनीति देश को पचा जाने की चेष्टा करती है। उन्हें राजनीति तब काटने दौड़ती थी जब उसके कर्ता-धर्ता देश में वर्ग भेद का कुचक्र पैदा कर अपनी रोटी सेंकने लगते हैं। रवीन्द्रनाथ त्यागी आम जनता को ये समझाना चाहते हैं कि राजनीति वास्तव में पाखंड है, ढोंग है। ये राजनेता के रूप में अभिनेता हैं जो बाहर कुछ और अंदर कुछ और है। देश का कोई भी नेता इस ढकोसलेबाजी से अछूता नहीं है। देशभक्ति और जन कल्याण का प्रदर्शन कर स्वयं की शक्ति संचय करते है। यद्यपि आजादी के कुछ वर्षों तक "जब तक वरिष्ठ और देशभक्त नेता लोग सत्ता में रहे तब तक फिर भी काम ठीक ठाक चलता रहा। मगर बाद में चलकर स्थिति खराब हो गई। खेती की उन्नति पर ध्यान क्या दिया गया, देश में नेताओं की पैदावर धान और बाजरे से भी ज्यादा होने लगी। जो लोग लड़की भगाने के चक्कर में भी सन् बयालिस में जेल काट आए थे, वे भी देशभक्त नेता कहलाने लगे। विधायकों का चुनाव रिश्वत, जातिवाद और जूते के आधार पर होने लगा और विधान सभाओं के भीतर कुश्तियाँ होने लगी। दल-बदल और 'आयाराम-गयाराम' की कृपा से सरकारें रोज बदलने लगी।"2 लेखक महसूस करते हैं कि आजादी के बाद से हम चाहे कुछ बने हों, किन्तु हमारी भारतीयता समाप्त हुई-"हम कुछ भी हैं पर भारतीय नहीं है।"3 भारतीयता के इस ह्नास का कारण लोगों की सांस्कृतिक विकृति और विदेशी सभ्यता का भ्रामक मोहजाल है। सारे देश में विदेशी मुखौटा व्याप्त है, विदेशी रंग-ढंग एवं हाव-भाव ही व्यक्ति का सांस्कृतिक स्तर कायम करती है। देशवासियों का यह विदेशीकरण व्यक्ति को बहुरूपिया बनाता है। वर्षों तक विदेशी रौब की लाचारी ढोने वाले देशी शासन के हाथ आते ही उसी रौब की अतृप्त कामना पूरी करने लगे। कहने को वे जनता के प्रतिनिधि कहलाये, जो जनता द्वारा चुने गए, जनता के लिए एवं उन्नति के लिए सत्तासीन हुए। वास्तविकता यह है कि सत्ता के मोह ने उन्हें उत्तरोत्तर बौना ही बनाया। जनहित एवं जनोद्धार के बजाय वे अवसरवादिता को महत्व देने लगे। रवीन्द्रनाथ त्यागी कहते है-"मार्च में बुलबुल हूँ और जुलाई में परवाना हूँ, जैसा मौसम हो मुताबिक उसके मैं दीवाना हूँ।"4 आजादी के बाद देश में ऐसे अवसरवादी ढोंगी नेताओं की संख्या बढ़ी है। ये नेता राजनेता ही नहीं अपितु सामाजिक, औद्योगिक, प्रशासनिक सभी क्षेत्रों में अपनी सत्ता का दुरुपयोग करते हुए जनता पर हावी हैं। जनता अपने ही अधिकारियों, प्रतिनिधियों से त्रस्त हैं। आजादी के पूर्व के दुख-दर्द विदेशियों के अत्याचार के कारण थे जबकि आजादी के बाद हमारे ही कर्णधार हमारी ही पीठ पर चाकू भोंकने लगे। मुँह में आश्वासन, आचरण में शोषण की नीति अपनाते हुए इन्होंने अपनी भोली-भाली समर्पित जनता का निर्मम दोहन किया है। प्रजातन्त्र से जिस प्रगति एवं उत्कर्ष की उम्मीद

थी, उस पर प्रश्नचिह्न लग गया है, "कहने को तो प्रजातंत्र है पर वास्तविकता यह है कि तन्त्र जो है, वो प्रजा से अब भी शक्तिशाली है।"5 पहले वोट छीनना और बाद में नोट लूटना-इनके अलावा किसी भी पार्टी के पास और किसी भी नेता के पास और कोई उद्देश्य नहीं रहा। नेताओं, विधायकों सांसदों के दोगलेपन पर व्यंग्य करते हुए रवीन्द्रनाथ त्यागी कहते है-"अगर हम ही बौने हैं तो वे कहाँ से लम्बे होंगे ?"6 यह छोटा-सा वाक्य हमारे चिन्तन को झकझोर कर रख देता है। तन्त्र की यह शक्ति शासन के मुट्ठी-भर लोगों के हाथ में है, बाकी जनता आज भी उतनी ही दयनीय एवं पराश्रयी है जितनी वह आजादी के पूर्व थी। आजादी के बाद एवं आजादी के पूर्व की उसकी स्थिति में कोई बुनियादी अन्तर आया है तो सिर्फ यह कि विदेशियों की गद्दी पर देशी अधिकारों के अत्याचारों से वह और भी त्रस्त, दुःखी एवं क्षुब्ध है। "हमारे देश में कोई भी राजनीति बिना जुर्म और अपराध के अधूरी ही रहेगी।"7 प्रजातंत्र के वैषम्य पर 'अपना देश चिन्तन के कुछ क्षण' में वे लिखते हैं-इस चमन को आजाद हुए पच्चीस वर्ष हो गये। इस अवधि में यहाँ काफी कुछ हुआ। नदियों पर बाँध बने। सीमा पर युद्ध जीते गए, कारखाने और बैंकों में हड़ताल हुई और सड़कों पर दंगे हुए। नये स्टेशन और डाकखाने खुले और कहीं-कहीं पुलिस के सहयोग से आम नागरिकों की खोपड़ियाँ भी खुलीं।...प्रजा की हम इज्जत करते हैं और इसी कारण प्रजा शब्द का प्रयोग तंत्र से पहले किया है। पर सच्चाई में स्थिति यही है जो सीता-राम शब्द में सीता की और राधा कृष्ण में राधा की है।"8 देश का दुर्भाग्य है कि होनहार और ईमानदार लोग नौकरियों में चले जाते हैं और जो नकारा और गलत किस्म के इंसान है वे चुनाव लड़ते हैं। विधानसभा के मेंबर तक लाखों रुपयों की हैसियत रखते है।"9 दल-बदल आज के नेता की प्रकृति बन गई है। गिरगिट की तरह रंग बदलना उसके लिए आम बात है। देशी समस्याओं का हल विदेशों में ढूँढा जाने लगा और आये दिन ये विदेशों के दौरे करने लगे। विदेशी सरकार ने अफसरों के अलावा जो दूसरा दान इस राष्ट्र को दे दिया, वह है नेता, "जो नेता लोग सरकार में है, वे एकदम पवित्र, निष्ठावान, कर्त्तव्य-परायण, गाँधीवादी व देशभक्त किस्म के हैं...जो लोग सरकार के बाहर हैं, वे चरित्रहीन, विदेशों के गुलाम, लफंगे किस्म के लोग हैं...जब ये लोग सरकार में आ जाते हैं तो ये भी पवित्र और अनुशासन प्रिय हो जाते हैं।"10

स्वतंत्रता आन्दोलन के साथ ही समाजवाद का आगमन भारत में हुआ। आज प्रजातंत्र के युग में समाजवाद केवल मखौल का विषय बनकर रह गया है। समाजवाद की एक परिभाषा यह रह गई है कि जो खाओ वह बाँटकर खाओ, चाहे वह रोटी हो या रिश्वत।"11

इस तरह रवीन्द्रनाथ त्यागी ने अपने व्यंग्य द्वारा भारत के अनोखे समाजवाद का चित्र हमारे सामने रखा है। भ्रष्टाचार का आज सर्वत्र बोलबाला है इसलिए "सरकार में जो कालाधन मंत्रियों को दिया जाता वह पार्टी के वास्ते दिया गया चंदा है।"11 वास्तव में आज का भारतीय परिवेश विसंगतियों का अखाड़ा बना हुआ है। आज राजनीतिक नेताओं से प्रेरणा लेकर उनके पद-चिह्नों पर चलकर व्यापारी, प्रशासनिक अधिकारी और समाज का हर प्रभावी वर्ग या चतुर व्यक्ति, भ्रष्टाचार का साझेदार बन गया है। चुनाव के बारे में रवीन्द्रनाथ त्यागी लिखते है-" चुनाव आम तौर पर हर पाँच वर्ष बाद होते हैं।

चुनाव जीतने के बाद गधा नेता कहलाता है। वे टोपी पहिनते हैं, सरकारी मोटरों पर चलते हैं, शानदार कोठियों में रहते हैं, भ्रष्ट अधिकारियों की मदद से अगले चुनाव के लिए पैसा इकट्ठा करते हैं और बाकी वक्त में देश के लिए कानून बनाते हैं और सरकार चलाते हैं। जिस दल में ज्यादा गधे होते हैं, वही दल सरकार बनाता है और इसी कारण कभी-कभी ऐसी नाजुक स्थिति आ जाती है कि दलदबदल करने के सन्दर्भ में एक-एक गधे की कीमत पन्द्रह लाख रुपये तक पहुँच जाती है।"12 जनतन्त्र का आधार स्तम्भ संसद और विधानसभा है। यहीं से देश और राज्य के शासन की बागडोर चलती है। ये जनता की इच्छा-आकांक्षाओं के प्रतिबिम्ब होते हैं। परन्तु वास्तव में होता यह है कि, ये स्थल चप्पलबाजी, हाथापाई, गाली-गलौज और अराजकता के अड्डे बन गये हैं। "सरकार के तीनों अंग बड़ी मुस्तैदी से अपनी-अपनी जिम्मेदारी पूरी तरह निभा रहे हैं। व्यवस्थापिका में जाने के लिए गुंडों और काले धन की नाव से वैतरणी पार की जा रही है और चुनाव जीतने के बाद सम्मानित सदस्य या तो सदन में जाते ही नहीं और जाते हैं तो या तो हाथापाई करते हैं या फिर निद्रालाभ करते हैं। जो थोड़ा-बहुत समय बचता है उसमें अगले चुनाव के लिए धन इकट्ठा किया जाता है। कार्यकारिणी को भ्रष्टाचार, राजनेताओं की खुशामद और देशी व विदेशी यात्राओं से ही फुर्सत नहीं मिलती। वहीं न्यायापालिका की गरिमा के लिए वकील और जज लोग स्वयं ही इतना कष्ट उठा रहे हैं कि बाहरी मदद की कोई जरूरत ही नहीं रह गई है।"13

लोकतंत्र में सबसे महत्त्वपूर्ण होती है-सत्ता। आजादी के बाद सम्पूर्ण राष्ट्र पर सत्ता का ऐसा नशा चढ़ा कि मानव एवं मानवीय मूल्य का उपयोग खाद के रूप में किया जाने लगा। रवीन्द्रनाथ त्यागी व्यंग्य करते हुए कहते हैं- "सत्ता से बड़ी चरित्र ठीक करने वाली कोई दवा आज तक नहीं निकली और न कभी निकलेगी ही।"14 भविष्य के प्रति यह निराशा, सत्ता की इस पिपासा के मूल में नेताओं का दोगला चरित्र एवं आचरण है, "ये लोग खादी पहनते हैं, मदिरापान करते हैं और उपवास रखते हैं जबकि इनके बच्चे मसूरी और नैनिताल में पढ़ते हैं। अहिंसावादी होते हैं हालांकि विधानसभाओं के अन्दर जूता चलाते हैं। ये लोग कभी पाप का पैसा नहीं पाते। हाँ अलबत्ता यदि कोई सेठ साहूकार अपना काम करवाने के लिए पार्टी को ही चन्दा दे जाये तो ये बेचारे क्या करें ? प्रजातन्त्र के नाम पर नेता लोगों ने देश खा डाला।15

वास्तविकता यह है कि लोग राजनीति में अपनी-अपनी महत्वकांक्षाएँ पूरा करने के लिए ही आते है। देशभक्ति या लोगों के दुख-दर्द से उन्हें कोई वास्ता नहीं है। उनका अपना सत्य है सामने वाली पार्टी की खिलाफत करना। लोकतंत्र अब वह बन गया है जिसमें लोक को लात मार दी जाती है। धनजंय वर्मा ने परसाई रचनावली की भूमिका में लिखा है-"सत्ता के हस्तान्तरण के रूप में पाई गई राजनीतिक आजादी और उसके बाद तीन-चार दशकों में भी मौजूदा पूंजीवादी और सामाजिक व्यवस्था में शोषण और दमन की शिकार भारतीय जनता आज भी अपनी मुक्ति के संघर्ष में लगी है। आजादी तो मिल गई पर आम जनता का शोषण अब भी बरकरार है। सामाजिक-राजनीतिक अव्यवस्थाओं से जनसामान्य अभी भी उबर नहीं पा रहा। धनजंय वर्मा जी की

वर्तमान पीढ़ी के लिए लिखी ये बात कितनी यथार्थ है-एक ऐसी पीढ़ी जिसे न कोई स्वप्न देखने का मौका मिला और न कोई मोह पालने की फुरसत, आँख खोलते ही उसे भ्रष्टाचार, अपराध, विभिषकाएँ, यन्त्रणाएँ विसंगतियों और निरर्थकताएँ देखने को मिलीं। गरीबी, भुखमरी, अकाल और दमन के बीच पिसती हुई नेताओं के झूठे वायदे और दल बदलकर सत्ता से चिपकने की बेगैरत कोशिश के बीच लुटी हुई है।"16 इसलिए रवीन्द्रनाथ त्यागी गधे को देश की जनता का सच्चा प्रतीक माना हैं, वे कहते है, "गधा जो है वह हमारे देश की जनता का सच्चा प्रतीक है, कितना भी पीट लो, कितना भी बोझा लाद दो यह गरीब कुछ नहीं बोलेगा। यही तो वह रहस्य है जिसके कारण इन विशाल सरकारी इमारतों में न जाने कितने सूट या शेरवानी पहनकर बैठे हुए हैं और देश को निरन्तर प्रगति की ओर ले जा रहे हैं।"17

आज गांधीजी के सिद्धान्त सिर्फ सत्ता प्राप्त करने का जरिया बन कर रह गये है,"हमारी सरकार गांधीजी की अपेक्षा उनके बन्दरों की कहीं ज्यादा कद्र करती है। वह न कुछ सुनेगी, न कुछ देखेगी और न कुछ बोलेगी। गांधीजी पीछे रह गये और उनके बंदर और गधे कहीं आगे निकल गए।"18 डिज़रायली ने कहा है कि, "राजनीति जो है वह एक धूर्त व्यक्ति की अंतिम शरण होती है" यह कथन आज भी प्रासंगिक है। रवीन्द्रनाथ त्यागी आम जनता की पीड़ाओं से परिचित थे देश की भुखमरी, बेरोजगारी से संघर्ष करता आम आदमी उनके सामने खड़ा था, जिसे रवीन्द्रनाथ त्यागी ने अपनी लेखनी में उतारा। वे आजादी के खोखलेपन को उजागर करते हुए लिखते है- "आप हम सब बराबर हैं। जो मुर्गे खाता है वह भी आजाद है और जो दलिया खाता है वह भी आजाद है। वह जो कोठी में रहता है वह भी आजाद है और जो फुटपाथ पर सोता है वह और भी ज्यादा आजाद है। जो लट्ठे के थान छिपाता है वह भी आजाद है और जो चिथड़े पहिने घूमता है वह भी आजाद है। आजादी भी क्या बड़ी और बेहतरीन चीज है।"19

निष्कर्ष

स्वतंत्रता के बाद की स्थितियों को समझने और अभिव्यक्त करने में रवीन्द्रनाथ त्यागी एक जागरूक साहित्यकार रहे हैं। कई मायनों में रवीन्द्रनाथ त्यागी के राजनीतिक चेतनायुक्त लेखन एक राजनैतिक दस्तावेज के रूप में अभिव्यक्त हुआ है। रवीन्द्रनाथ त्यागी ने स्वातंत्र्योत्तरकाल के भारत में पनपी बेकारी, नौकरशाही, विपक्ष की राजनीति, घूस, विधानसभाओं की जूतम-पैजार, मंत्री, नेता की नीतिहीनता और अवसरवाद आदि विविध स्तरीय विकृति तथा दोषों का पर्दाफाश किया है। इसके अतिरिक्त भी राजनीति में अनेकानेक समस्याएँ हैं, जिन्हें रवीन्द्रनाथ त्यागी ने प्रतिबिम्बत किया है तथा उसके समाधान भी प्रस्तुत किए हैं। वस्तुतः राजनीति का संस्कार साहित्य से ही हो सकता है, क्योंकि साहित्य समाज के प्रति उत्तरदायी है। स्वतन्त्रता के बाद के भारत की पूरी तस्वीर हमें रवीन्द्रनाथ त्यागी के लेखन में मिलती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1 डॉ.गुलाबराय, काव्य के रूप, आत्माराम एण्ड संस, नई दिल्ली 1964, पृ.160

2 रवीन्द्रनाथ त्यागी, यक्ष प्रश्न, मेधा बुक्स प्रकाशक, दिल्ली 2005 पृ.66

3 रवीन्द्रनाथ त्यागी, इस देश के लोग, पराग प्रकाशन दिल्ली, पृ.15
4 वही, पृ.25
5 रवीन्द्रनाथ त्यागी, शोकसभा, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस दिल्ली 1974 पृ.50
6 रवीन्द्रनाथ त्यागी, इस देश के लोग, पृ.26
7 रवीन्द्रनाथ त्यागी, यक्ष प्रश्न, पृ.33
8 रवीन्द्रनाथ त्यागी, शोकसभा, पृ.49
9 रवीन्द्रनाथ त्यागी, यक्ष प्रश्न, पृ.99
10 रवीन्द्रनाथ त्यागी, इस देश के लोग, पृ. 12
11 रवीन्द्रनाथ त्यागी, आत्मलेख, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली 1988 पृ.28
12 वही पृ.70
13 रवीन्द्रनाथ त्यागी, आत्मलेख पृ.75
14 रवीन्द्रनाथ त्यागी, भाद्रपद की सांझ-जानवर और जानवर राजकमल प्रकाशन पृ.18
15 रवीन्द्रनाथ त्यागी, इस देश के लोग, पृ.12
16 रवीन्द्रनाथ त्यागी, इतिहास का शव, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली 1993, पृ.149
17 कमलाप्रसाद, परसाई रचनावली, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली 1985, पृ.11
18 रवीन्द्रनाथ त्यागी, यक्ष प्रश्न, पृ.158
19 रवीन्द्रनाथ त्यागी, इतिहास का शव, पृ.172
20 रवीन्द्रनाथ त्यागी, आत्मलेख, पृ.109